International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(3): 91-94

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(3): 91-94
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 19-03-2016
Accepted: 20-04-2016

ज्वाला प्रसाद
सहायक कुलसचिव दिल्ली
विश्वविद्यालय दिल्ली–110007

Correspondence
ज्वाला प्रसाद
सहायक कुलसचिव दिल्ली
विश्वविद्यालय दिल्ली–110007

आधुनिक राजनीति का दर्पण : विक्रमचरितम

ज्वाला प्रसाद

भूमिका

विक्रमचरितम् नामक आख्यान में कम्बुग्रीव नामक शृगाल और चतुरिका नाम्नी शृगाली, ये दोनों मिलकर, प्रजापालक विक्रमसिंह नामक सिंह को वन के साम्राज्य से अपदस्थ करके और घूकर नामक शूकर को राजपद पर प्रतिष्ठित कर देते हैं, जिसका वीभत्स रूप आज मुखौटा फेंककर प्रकट हो चुका है। इसकी घटनाएँ तथा इसकी शैली, समाज और राजनीति के गुह्यतर सत्य को भी अभिव्यक्त करती हुई चित्त को अत्यधिक चमत्कृत करती है।

इसमें कथाकार राधावल्लभ त्रिपाठी ने घर के पिछवाड़े की गलियों के मैले में लोटने वाले इस घूकर नाम के शूकर को पुरस्कृत करके, वर्तमान समाज की सारी नग्नता को अनावृत किया है। यह शूकर बल से नहीं, अपितु छल से वन का साम्राज्य प्राप्त कर लेता है। इसके प्रति कथाकार के हृदय में महती वितृष्णा है, जिसका चित्रण उन्होंने वीभत्स रस को अंगी बनाकर किया है।

भाषाशैली

इस उपन्यास में राधावल्लभ त्रिपाठी के शब्द चयन एवं शब्दों के प्रयोग से ऐसा प्रतीत होता है कि रचनाकार को इस बात का सम्यक् ज्ञान है कि कब, कहाँ कैसी भाषा का प्रयोग करना चाहिये। अतः लेखक ने प्रसंगानुसार तथा पात्रानुसार शब्दों का प्रयोग इस उपन्यास में किया है। वर्षा के मनोहर नवागमन के वर्णन में उनकी कोमल कान्त पदावली संश्लिष्ट होती है। [1] लेखक द्वारा सूर्योदय का वर्णन भी रमणीय है। [2] रचनाकार द्वारा सूर्यास्त का प्रस्तुतिकरण भी अत्यंत ही प्रभावकारी ढंग से किया गया है। [3]

किन्तु सामान्यतः आख्यान की भाषा में प्रसादगुण की प्रधानता है। तिलकसिंह के लगुडप्रहार से पीड़ित घूकर के वर्णन में उनकी पदावली समास रहित है। [4] मृत्यु को सम्मुख देखकर उसके विलाप में सर्वथा अश्लिष्ट पदावली मनोरम है। [5] नाथ किमिति किमप्यनालप्यैवं मृत इव निगीर्ण इव निराशया, जीर्ण इव जरया, विशीर्ण इव शोकेन, शेषे शय्याम्। इसी प्रकार विस्मय की अभिव्यक्ति एवं स्थलों आदि में वक्ता और प्रसंग के अनुरूप शैली का परिवर्तन, उनके काव्यशास्त्रनैपुण्य का अभिव्यंजक है।[6]

वस्तुतः कथाकार कथा के प्रवाह के साथ–साथ चलते हैं। वे कभी दत्याक्षरबहुल वर्णों का प्रयोग करते हैं। [7] कहीं वे ओष्ठस्थानविवर्जित वर्णों का प्रयोग करते हैं। [8] कहीं वे समान वर्णों का मनोहर प्रयोग करते हैं।[9]

वे किसी भी वर्णन में यथाशक्य अन्वर्थ शब्दों का प्रयोग करते हैं। देवरों की कठोरवाणी सुनकर छोटी बहू बुक्का फाड़कर रो उठती है। उसे रोते देखकर भौजाई को कोसने में बेजोड़ होने के कारण 'निरुपमा' इस सार्थक नाम को धारण करने वाली उसकी ननद का मन जुड़ा जाता है और वह ननन्दा होते हुए भी सानन्द हो जाती है।[10]

उनकी शब्दयोजना नितान्त अन्वर्थ है। घूकर लोमड़ी का तिरस्कार करते हुए उससे कहता है – अरी मेरे लोम मात्र के बराबर की लोमड़ी! बता किसलिये आई है? [11] 'मम लोममात्रो लोमशिके' यह सम्बोधन, उस लोमड़ी की लघुता को अभिव्यक्त कर देने में पर्याप्त है।

पशुओं के इस कथानक में वे अनेक प्रकार के ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग करते हैं। ये शब्द घटना को सीधी अभिव्यक्ति देते हैं। यथा– खीङ् खीङ् कृत्वा, घूङ् घूङ् कृत्वा, गूंकारं प्रकुर्वन्, सूँ सूँ कुर्वती, कूँ कूँ कुर्वती, खिच् खिच् ध्वनिं निःसारयन् आदि। इसी प्रकार पिन् पिन् करके रोना, घूत्कार पूर्वक साँस

छोड़ना, शीत्कारपूर्वक फूत्कार करना, धमत्कारपूर्वक डराना, इत्यादि अनेक शब्द भावाभिव्यक्ति के सहायक हैं।

कथाकार ने राष्ट्रभाषा हिन्दी के मुहावरों का भी संस्कृत में स्वतन्त्रता से यथावत् प्रयोग करके संस्कृत को अधुनातन बनाया है। [12] यथा– नमक मिर्च मिलाकर [13], मानों साँप सूँघ गया हो [14], अपना सिर ओखली में डालना।

उन्होंने हिन्दी के प्रभाव से संस्कृत में नये प्रयोग भी जोड़े हैं। यथा फफककर रोना [15], हाथ का पंजा, झोला [16] इत्यादि।

अन्यच्छाया – वे अनेक स्थानों पर, प्रसिद्ध कवियों के प्रसिद्ध पद्यों को अथवा प्रसिद्ध वाक्यों को ज्यों का त्यों लेकर अपने काव्य में इस प्रकार सुनियोजित कर देते हैं कि वह सर्वात्मना उनके काव्य का अंग ही बन जाता है। आनुपूर्वी के परिवर्तन के बिना इस उद्धरणों को अपने कथानक में नियोजित कर लेना, यह उनकी अपनी शैली है जो कि अत्यन्त विलक्षण होने के साथ–साथ अत्यन्त हृदयग्राही भी है। इससे पूर्व महाकवियों के प्रति महत्त्वबुद्धि की अभिव्यक्ति भी उपन्यासकार राधावल्लभ त्रिपाठी द्वारा इस उपन्यास में की गई है।

अनेक स्थानों पर वे अन्य कवियों के भावों से अनुप्राणित होकर रचना करते हैं, किन्तु ये अन्यच्छाया भी मानों कथानक से समवायसम्बन्धेन सम्बद्ध हो जाती है। यथा – विनिर्गते तस्मिन्नस्तचन्द्रमिव नभःस्थली शून्या निष्प्रभा च बभूव। [17] इस पर भास की स्पष्ट छाया है। 'अन्तःस्मितोच्छ्वसितपाण्डुरंगण्डभित्तिं तां वखभमलसहंसगतिं स्मरामि। [18] इस पर भासकृत स्वप्नवासवदत्तम् के 'तां पद्मिनीं हिमहतामिव चिन्तयामि' इस पद का तथा विनिर्गते तस्मिन्नस्तचन्द्रमिव नभःस्थली शून्या निष्प्रभा च बभूव, [19] इस वाक्य पर स्वप्नवासवदत्तम् के 'प्रोषितनक्षत्राचन्द्रमिव नभोऽरमणीयः संवृतः' इस वाक्य का स्पष्ट प्रभाव है।

उनके पात्र अपने वार्तालाप में अपने प्रसंगानुसार संस्कृत के प्रसिद्ध काव्यों तथा शास्त्रों की पंक्तियों को यथावत् उद्धृत करते हैं। समुचित प्रसंग में दिये हुए ये उद्धरण अत्यन्त मनोहारी प्रतीत होते हैं, साथ ही कवि की बहुज्ञता और शास्त्रनिष्ठा को अभिव्यक्त करते हैं। यथा – वैतालिकों के गान को सुनाकर घूकर वाग्देवतावतार मम्मटाचार्य के काव्यप्रयोजन विषयक 'काव्यं यशसेऽर्थकृते' को ज्यों को त्यों उद्धृत करते हुए कहता है– काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षयते। सद्यः परनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे। इह तावत् भवतां काव्यपाठो न यशो, न धनं, न व्यवहारज्ञानं, नाप्याविर्भावयति शिवेतरक्षतिं, का कथा सद्यः परनिर्वृतेः, कान्तासम्मिततयोपदेशानां वा। [20] इसी प्रकार मम्मट के अन्य उद्धरण भी इसमें हैं – कम्बुकण्ठः प्रीतिस्त्रिग्धैर्लोचनैः चतुरिका निर्वर्णयन् कृत्रिमैरप्यकृत्रिमैरिव प्रतीयमानैः काव्यनाट्यादिगत – विभावानुभावादिविशेषैर्वचोभिः प्रसादयामास। [21] ;रससूत्र पर मम्मट की व्याख्याद्ध ।

वनराज सिंह विक्रम के शयन करने पर वैतालिक काव्यप्रकाश में उद्धृत इस श्लोक का पाठ करते हैं। [22]

समुचित सन्दर्भ में शूकर माघ के श्लोक को यथावत् उद्धृत करता है। [23] कहीं वे राजशेखर को उद्धृत करते हैं [24]। कहीं उनके पात्र भारवि की सूक्तियों को उद्धृत करते हैं। [25]

रस

यद्यपि इसका नायक सिंह विक्रम है, किन्तु वेणीसंहार के समान इसका उदय कथा के अन्त में ही होता है। तब तक कथाकार घूकर नामक शूकर को मुख्य पात्र बनाकर आख्यान के अंगी रस वीभत्स का सर्वात्मना परिपोषण करते हैं। वस्तुतः इसका वे आद्यन्त निर्वाह करते हैं।

घूकर की प्रथम परिणीता शूकरी कलंकवती का सौन्दर्य वर्णन तदनुरूप ही है। घड़े की तरह विशाल उसका उदर धरती को छूता है। अतः वह हथिनी की तरह मन्द गति से चलती हुई घूकर का मन हर लेती है– सेयं प्रथमपरिणीता कलंकवती स्वविशालभाण्डोदरस्य भूमिं स्पृशतो भारात् हस्तिनीव मन्दं प्रयान्ती, अंचितैर्गतागतैरिदानीमपि घूकरस्य मनो जहार। [26]

चूँकि आख्यान का अंगी रस वीभत्स है, अतः उनकी शूकरोचित स्वाभावोक्तियाँ भी वीभत्स हैं। वृक्ष के नीचे बैठे शूकर के माथे पर जब पाटच्चर वानर मल–मूत्र विसर्जित कर देता है, तो इस महामस्तकाभिषेक से उस घूकर का सारा क्रोध उतर जाता है तथा वह शान्त होकर परमाह्लादित हो जाता है। [27]

किन्तु जब उसके नासापुट में चम्पक, यूथिका, पाटल आदि के सुगन्ध से मिश्रित वन का शुद्ध समीर प्रविष्ट होता है, तब वह शूकर व्याकुल हो जाता है। यह सुगन्ध उसके लिए मर्मविदारक है, मृत्युभय को उत्पन्न करने वाली है। इससे मूर्च्छित होते हुए वह कहता है– चम्पा, जुही, गुलाब की दुर्गन्ध ने तो मेरा कलेजा चीरकर रख दिया है। इन फूलों की गन्ध वाली हवाएँ तो मुझे मार ही डालेंगी। अतः वह तेजी से भागकर एक कीचड़ के पोखर में निमग्न हो जाता है। [28]

यह भी कितना स्वभाविक है कि जब घूकर को गेंदे के फूल की वजनी मालाएँ पहिनाई जानें लगीं, तो उनकी सुगन्ध से उसका माथा चकरा गया। उसने सोचा कि निश्चय ही यह मुझे मार डालने का षडयन्त्र है। [29]

राजनेताओं का चरित्र

लेखक ने 'विक्रमचरितम्' में आधुनिक राजनीति के समस्त सूक्ष्म पक्षों को व्यापक फलक प्रदान किया है। उनकी लेखनी का स्पर्श पाकर वर्तमान राजनीति जीवन्त हो उठी है। सर्वप्रथम शूकर की जन्मजात मनोवृत्ति में मलिनता से आनन्दित होने के भाव में लेखक की यही व्यंग्योक्ति निहित है कि जीवन में उच्च स्थान को प्राप्त करके भी अपने स्वभाव को नहीं छोड़ पाता। शूकर स्वयं में इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। [30]

शुद्ध वायु से उसे शिरोवेदना होती है। प्रचुर कृमिकीट से युक्त कीचड़ का सरोवर ही उसकी शक्ति है, आनन्दित होने के लिए विहारस्थली है। शुद्ध जल का स्नान, पुष्पों की मालाएँ, चंदन अगरु की सुगन्ध ही मानों उसके लिए राजपद के अन्त का दुःस्वप्न बन जाती है।

राधावल्लभ त्रिपाठी की बेबाक शैली का अंदाज इस बात से लगाया जा सकता है कि वे शूकर को मनुष्य से अधिक स्वाभिमानी कहकर मनुष्य की तुच्छता की बात करते हैं। [31] घूकर को दुःख ही इस बात का है कि– 'मनुष्यमारं मारितोऽस्ति।' न तथा बाधते लगुडताडितस्य देहस्य वेदना यथा मनुष्यविहित–निराकृतिवेदना। तत् किमनेन पराभवपराहतेन जीवितेन विष्टौ गृहीता अपि श्रमिका नेत्थं ताडयन्ते। परन्तु उसकी पत्नी कलंकवती इससे भी अधिक क्रूर कटाक्ष मानवमनोवृत्ति पर करके मनुष्य के आचरण, व्यवहार एवं चरित्र पर प्रश्न चिह्न लगा देती है। [32]

राजनीतिक वातावरण

लेखक की वर्णनशैली का चमत्कार सम्पूर्ण आख्यान को प्रभावित करता रहा है। अपनी कलात्मक उपलब्धियों को प्रस्तुत करना उनका उद्देश्य कदापि नहीं है। वे तो स्थिति को इतना सजीव और प्रकृष्ट रूप में चित्रित करते हैं कि पाठक प्रत्येक स्थान पर विषयवस्तु को आवरण से मुक्त देखता है। बात यदि शूकरमनोवृत्ति की है तो त्रिपाठी सरोवर, जलाशय और चमेली–चम्पा के वनों में नहीं उलझते अपितु सीधे–सीधे पाठक को विष्ठापूरित नालियों के किनारे खड़ा कर देते हैं। [33]

'विक्रमचरितम्' आख्यान का प्रमुख उद्देश्य वर्तमान राजनीति के विभिन्न पक्षों को चित्रित करना है। राजनीति की यह विकृति समाज के लिए किस प्रकार नासूर बन गयी है, यह पीड़ा इस कथा के अष्टम उच्छवास में विस्तार से व्यंजित हुई है। अयोग्य व्यक्ति का पदासीन होना राष्ट्र के पतन का कारण बन सकता है। यह जानते हुए भी हम धर्म, जाति और वर्ग के आधार पर अनेक दीवारें खड़ी कर रहे हैं। चाहे देश का सर्वनाश हो जाये, अथवा सामाजिक, आर्थिक, साहित्यिक समझौते करने पड़े, या हमारा धर्म रसातल में चला जाये परन्तु शासन की निरन्तरता बनी रहे।

राज्यसुख की लालसा और कुर्सी पर बैठने का मोह त्रिपाठी को अनेक स्थानों पर मुखरित कर गया है। [34]

इस आख्यान को पढ़ते समय पाठक अपने आसपास के परिदृश्य को साथ लेकर चलता है। बार–बार बनती–बिगड़ती सरकारें सामान्य मनुष्य का राजनीति के प्रति मोहभंग कर रही है। अस्थिर सत्ता को प्राप्त करते ही स्वार्थ–सिद्धि की प्रक्रिया, अपरिवर्तित रूप में पुनः प्रारम्भ हो जाती है। परिवर्तनों की इस बाढ़ में समूचा देश बह जाता है। चाहे मन्त्रिमण्डल के विस्तार का बहाना हो अथवा दलितों का वोट बैंक सुरक्षित रखने का आश्वासन हो। प्रत्येक गली, सड़क, जिला, नगर सभी इस परिवर्तन का त्रास भोगते हैं। [35]

राजनीति के गलियारों में मन्त्री–पद पाने की प्रतिस्पर्द्धा से गर्भित चरित्र वाले राजनेता जनता के बीच अपनी छवि धूमिल कर रहे हैं। प्रजा का विश्वास छला गया है। मन्त्रिमण्डल विस्तार के ब्याज से मन्त्रियों का क्रय–विक्रय किया जा रहा है। सब कुछ जानते हुए भी विकल्प के अभाव में प्रबुद्ध वर्ग मौन है। यही कारण है कि हमारी राजनीतिक आस्थाएँ अपने मूल्य खो रही है। राधावल्लभ त्रिपाठी भी एक आम नागरिक की भाँति इस व्यवस्था के समक्ष स्वयं को बौना महसूस करते हैं। उनकी व्यथा इन शब्दों में देखी जा सकती है। [36]

चाटुकारिता की नींव पर ही राजनीति का भवन तैयार किया जाता है, 'विक्रमचरितम्' इसी तथ्य को सिद्ध करने का एक प्रयास है। एक शूकर राजा बनने की स्थिति में किस प्रकार स्तुतियोग्य हो जाता है। कम्बुकण्ठ और लोमड़ी जैसे चाटुकार किस प्रकार उसे भ्रमित करते हैं? यह पंचम उच्छास के प्रारम्भ में शूकरवन्दना से ही स्पष्ट हो जाता है। [37]

इस आख्यान में लेखक ने राजनीतिक विसंगतियों के साथ–साथ उसकी सफलता के बिन्दुओं पर भी अपनी दृष्टि रखी है। साम, दाम, दण्ड और भेद की नीति का प्रतिफल सम्पूर्ण कथा–प्रसंग में पदे–पदे पाठक को आन्दोलित करता है। इसका प्रत्येक उच्छ्वास एक विशिष्ट शिक्षा का संवाहक है। प्रथम उच्छ्वास में विवेक का परित्याग करने वाला शूकर दुर्दशा को प्राप्त करता है क्योंकि वह आत्ममूल्यांकन किये बिना अपनी शक्ति और सामर्थ्य को न जानते हुए तिलकसिंह की हवेली में घुसने का दुस्साहस करता है। परिणामतः तिरस्कृत एवं निन्दित होता है। क्रमशः अन्य उच्छ्वास चाटुकारिता, भेदनीति, राज्यलिप्सा, सत्तापरिवर्तन, स्त्रीचातुर्य और आधुनिक राजनीति की दुर्दशा को चित्रित करते हैं। साहित्य की पतनशीलता का कारण भी वे इसी राजनीति को मानते हैं जिसमें धन एवं यश की कामना के वशीभूत होकर तथाकथित विद्वान् निरन्तर स्तुति–साहित्य का सृजन कर रहे हैं। उपाधियाँ एवं सम्मान चाटुकारों में बाँटे जा रहे हैं। वस्तुतः ऐसे सतही साहित्य की सर्जना में श्रेष्ठ रचनाकार का वर्चस्व कहीं खो गया है। त्रिपाठी की इस व्यंग्य दृष्टि का आलोक यत्र–तत्र परिलक्षित होता है। [38]

आधुनिक स्त्री विमर्श

सम्पूर्ण आख्यान में लेखक त्रिपाठी ने राजनीति के अतिरिक्त यदि किसी अन्य विषय को प्रश्रय दिया है तो वह है स्त्रियों के प्रति उनका नकारात्मक दृष्टिकोण। सम्भवतः इसका कारण परिस्थितिजन्य, दृश्य एवं पत्रानुकूलता भी हो सकती है। परन्तु जहाँ भी लेखक को स्थान मिला है, उन्होंने स्त्रियोचित दुराग्रह, छल, चरित्रहीनता को विस्तारपूर्वक वर्णित किया है। एक दृश्य में तिलकसिंह के पुत्रों द्वारा आहत घूकर नामक शूकर मृततुल्य हुआ अपनी भार्या कृशोदरी का वार्तालाप सुनता है। वह अपनी सौत कृष्णमुखी से कह रही थी–

> 'सखि स्वैरं विहृतं मया तेषु तेषु विच्छिलपल्वलप्रदेशेषु तरुणैः शूकरैरत एव प्रणयसहचरोऽप्ययं घूकरो न सम्प्रति तथा मनोहरः।

इसके अतिरिक्त, दुश्चरित्रा, पुंश्चली लोमड़ी प्रौढ़ावस्था में भी कंबुकंठ सियार के साथ न केवल अभिसार करती है अपितु राजा विक्रमसिंह से असत्य घटनाक्रम कहकर राजनीति में भी अपनी सक्रिय प्रतिभागिता बनाये रखती है। अनियन्त्रित काम के वशीभूत हुई वेश्या के समान उसे अंग–प्रत्यंग कामासक्ति में ही आनन्द पाते हैं। [39]

इस प्रकार लोमड़ी छल से परिपूर्ण एक ऐसा नारी चरित्र है, जो विशाल दुर्गम वन के स्वामी सिंह जैसे पराक्रमी राजा को भी अपने त्रियाचरित्र से पराजित कर देती है। स्त्रियों पर लेखक का अणुमात्र भी विश्वास प्रतीत नहीं होता क्योंकि शुकपुरोहित द्वारा कहा गया यह वचन मानों उनकी प्रतिध्वनि को ही रेखांकित करता है। [40]

राधावल्लभ त्रिपाठी द्वारा विरचित 'विक्रमचरितम्' एक ऐसा साहित्यिक दर्पण है, जिसमें भारतीय गणतन्त्र की आधुनिक राजनीति पूर्णरूपेण प्रतिबिम्बित है। इसमें प्रत्यक्ष आक्षेप के बिना जिन बिन्दुओं को पदे–पदे चिन्हित किया गया है, वह पाठकों के लिए बोलते चित्र बन गये हैं। पंचतन्त्र की शैली से अनुप्राणित यह आख्यान हास्य और व्यंग्य की ऐसी वीथिका है, जिससे निकलकर पाठक आस्वादमय सन्तोष का अनुभव करता है। हिन्दी अनुवाद के साथ सहेजा गया यह आख्यान संस्कृत से इतर अपने अन्य पाठकों को भी साथ लेकर चलता है। इसमें सरल भाषा के साथ–साथ संतुलित एवं परिष्कृत शैली का भी मणिकांजन संयोग दृष्टिगोचर होता है। नौ उच्छ्वासों में विभाजित इस कथानक ने अपनी गत्यात्मकता का अन्त तक निर्वाह किया है। यह इतना रोचक है कि पाठक इसे प्रारम्भ करने के उपरान्त इसकी समाप्ति पर ही विराम लेता है।

इस प्रकार इस आख्यान से लेखक ने स्वयं को चिरपुरातन होकर भी चिरनवीन सिद्ध कर दिया है।

त्रिपाठी द्वारा विरचित 'विक्रमचरितम्' 'जार्ज ऑखेल' के अंग्रेजी उपन्यास 'एनीमल फार्म', से प्रभावित होकर लिखा गया प्रतीत होता है जिसमें 'स्टालिन' और ट्राट्स्की के चरित्र को दो शूकरों के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। यद्यपि कथावस्तु की दृष्टि से दोनों में मूलभूत भिन्नता है। परन्तु सम्भवतः यह देश, काल और स्थान का प्रभाव भी हो सकता है। अतः लेखक का चिन्तन इससे प्रभावित अवश्य कहा जा सकता है।

अन्ततः इस तथ्य को निर्विवाद स्वीकार किया जा सकता है कि यह आख्यान अपने विविध रचना–बिन्दुओं पर खरा उतरता है। इसकी गत्यात्मकता, रोचकता और कल्पनाशीलता इतनी प्रभावशाली है कि साधारण पाठक से लेकर एक जिज्ञासु अध्येता को भी स्तब्ध कर देती है। इसका कोई भी पक्ष अपूर्ण, रसहीन एवं बोझिल नहीं लगता। पाठक आधुनिक राजनीति में जीते हुए इस कथा के साथ–साथ चलता है। राजनीति की पारदर्शिता ही इस आख्यान की आधारभूमि है। इस भूमि पर पुष्पित एवं पल्लवित हुई यह कथा कथाकार राधावल्लभ त्रिपाठी को समकालीन कथालेखन में युगानुरूप सिद्ध करती है।

पाद टिप्पणी

1. अथोपेयुष्याषाढे कज्जलचयेष्वपि घनघटासु नभसिच्छटामनुपमां प्रकटयन्तीषु सहसा पूगस्थूलं ववर्ष मघवा। सद्यः सीरोत्कषणसुरभि समभवत् समस्तं वनप्रान्तम्। उन्मीलितानि कुटजपुष्पाणि। चम्पकश्चमत्कृतिमाततान। – विक्रमचरितम्, पृ. 36
2. अथ प्रभातायां रजन्यां पुन श्चूंकुर्वत्सु नीडेषु कलरवं कलयन्तीषु तरुशाखासु स्पुफटत्सु रविकरजागरितेष्विव पल्लवपंकप्रश्ढ़ेषु पंकजेषु घूकरो जजागार। – विक्रमचरितम्, पृ. 31
3. अनेन समयेन परिणतो दिवसः। च्युतसंस्काराकाण्डाप्रथनाकाण्डच्छेकदादिदूषितं काव्यं श्रावं श्रावमपि समीक्षकशिरोमणिः अतिबीभत्सभयानकादिसंवलितं कुकविकृतं नाटकमिव प्रयुज्यमानं दर्शं दर्शं दर्शको

दिनकरमणिरस्ताचलविनिहितमौलिः किमपि दध्यौ। – विक्रमचरितम्, पृ. 37

4. वेपथुः प्रजायते। परिशुष्यति मुखम्। घूर्णते शिरः। विचलति चेतः। – विक्रमचरितम्, पृ. 4
5. हा कलंकपति! त्वामपश्येत्रव त्यजामि जीवितम्। हा कृष्णमुखि! कामं विस्मर माम्। – विक्रमचरितम्, पृ. 37
6. अहो वैदग्धी, अहो वैदुषी, अहो शेमुषी। – विक्रमचरितम्, पृ. 15
7. स्वामिन्! सुन्दरवनस्यास्य सर्वे सत्त्वशीलाः श्रीमतामत्र समागमेन सम्प्रीताः स्वयमेव स्थानस्यास्य सम्राट् श्रीमतां सभ्यत्वेन स्वसभायां सभाजयितुं समुत्सुकः। अतः स्वीक्रियतां समीहास्माकम्। – विक्रमचरितम्, पृ. 19
8. चिरण्टि चेतः चिखिद्यते। – विक्रमचरितम्, पृ. 18
9. तालतमालहिन्तालसमाकुलम्। घोरैर्घूत्कारैर्घोषयन्तं तं घूकरम्। – विक्रमचरितम्, पृ. 28
10. क्रन्दन्तीं तामवलोक्य सानन्द बभूव ननन्दा। – विक्रमचरितम्, पृ. 6
11. अयि मम लोममात्रो लोमशिके! वद किमर्थमायाता। – विक्रमचरितम्, पृ. 66
12. लवणमरीचिपुरस्सरम् – विक्रमचरितम्, पृ. 37
13. सर्पेणाघ्रात इव – विक्रमचरितम्, पृ. 31
14. शिर उलूखले ददाति। – विक्रमचरितम्, पृ. 30
15. फूत्कृत्य रुदित्वा। – विक्रमचरितम्, पृ. 32
16. झोलकः। – विक्रमचरितम्, पृ. 24
17. विक्रमचरितम्, पृ. 7
18. विक्रमचरितम्, पृ. 19
19. विक्रमचरितम्, पृ. 7
20. विक्रमचरितम्, पृ. 27
21. विक्रमचरितम्, पृ. 20
22. कः कः कुत्रा नु घुर्घुरायितघुरी घोरो घुरेत्सूकरः। कः कः कं कमलाकरं विकमलं कर्तुं करीवोद्यतः। के के कानि वनान्यरण्यमहिषा नोन्मूलयेयुर्यतः। सिंहीस्नेहविलासबद्धवसतिः पंचाननो वर्तते।। – विक्रमचरितम्, पृ. 23
23. नालम्बते दैष्टिकतां न निषीदति पौरुषे।
शब्दार्थौ सत्कविरिव विद्वान् द्वयमपेक्षते।। – विक्रमचरितम्, पृ. 36
24. करोति काव्यं प्रयोगेण संस्कृतात्मा यथा तथा।
पठितुं वेत्ति स परं यस्य सिद्धा सरस्वती।। – विक्रमचरितम्, पृ. 27
25. वरं विरोधेऽपि समं महात्मभिः। – विक्रमचरितम्, पृ. 12
26. विक्रमचरितम्, पृ. 4
27. पाटच्चरः कपित्थवृक्षमधः पुरीषं मूत्रां च तन्मस्तके विससर्ज। महामस्तकाभिषेकेनानेन परमाह्लादमनुभवन् घूकरः सोच्छ्वासं जोषं धृततोषं स्थितः। – विक्रमचरितम्, पृ. 27
28. तत्क्षणं शुद्धसमीरेण नासापुटप्रविष्टेनाघूर्णत तच्छिरः। न जाने कस्माद् रसालकुंज्जात् कस्या जम्बूवाटिकाया समायान्तीमे चम्पकयूथिकापाटलादिघृणितदुर्गन्धमूर्च्छिता मर्मदारणा भ्रमिमरतिमलसहृदयतां तमः
शरीरसादमतितरा–मुत्पादयन्तस्तीक्ष्णगन्ध्वहाः–। – विक्रमचरितम्, पृ. 1
29. कन्दुकपुष्पदामभिर्भाराक्रान्त इव तत्सुगन्ध्ना घूर्णमानशिराः घूकर आत्मन्यात्मानं व्यगर्हयत्– निश्चप्रचं मां व्यापादयितुमयमेतेषामुद्योगः। – विक्रमचरितम्, पृ. 42
30. शूकर सुन्दरीभी रममाणा मलमूत्रादिग्धयां पूतिबहुलायां नानाकृमिकीट दंशमशकादिविहारस्थल्यां स्ववसतौ तिलकसिंहस्य सतिलकाभिः सीमन्तिनीर्भिर्वधूभि ... विष्ठा अश्नन् सुचिरमुवास।– विक्रमचरितम्, पृ. 21
31. नाहं नरः क कश्चन य एवं निराकृतोऽपि जीवयेम्। – विक्रमचरितम्, पृ. 23
32. एवं स्वज्ञातिभिर्विप्रलब्ध मानवा गच्छन्ति हताशतां न वयं शूकरा।
आहारनिद्राभयमैथुनानि सामान्यमेतत् तु नरैः पशूनाम्
धर्मः पशूनामधिको विशेषो, धर्मेण हीनास्तु नरैः समानाः। – विक्रमचरितम्, पृ. 31
33. नाथ किमेतत्? उपस्थितो मध्याह्न। गगनमध्यमारूढो दिनमणिः आप्रातः किमपि न भुक्तं पीतं वा स्वामिना। अनादृत्य दैन्यं निरस्य नैराश्यमिदानीमुत्थीयताम्। सज्जा सन्ति प्रणालिकातटे विविधविधा प्रत्यग्रहदिता विष्ठापुंजाः। किमप्यनन्तु पिबन्तु च प्रणालिक–जलं...। – विक्रमचरितम्, पृ. 43
34. यां विधतुं करस्थां न किं किं कृतं चातुरीभ्राजितैर्नेतृवर्यब्रुवैः। यां समासाद्य विस्मर्यते तैर्जनो वन्द्यतां कापि सा शासनासन्दिका।। – विक्रमचरितम्, पृ. 43
35. अस्या मन्त्रिापरिषदो मन्त्रिपरिषदिति नाम पुरातनं निरर्थकं चेति नामास्याः शूकरपरिषदिति यदि विधीयेत तर्हि सर्वथा शोभनं स्यादिति। दुर्गमवनमिति नाम न शोभतेऽस्य राज्यस्य। श्रूयते कदाचित् दुर्गमसिंहो नाम राजात्रा शास्ति स्म। सर्वथा गर्हितमेतद् यत् कस्यचित् क्षत्रियस्य नाम्ना देशस्य नामकरणमिति। – विक्रमचरितम्, पृ. 53
36. मन्दमतिर्नाम रासभो गृहमन्त्रित्वे, कम्बुकण्ठः खाद्यमन्त्रित्वे, प्रज्ञाचक्षुर्नामोलूकश्च रक्षामन्त्रित्वे नियोजिताः। हर्षिता बभूवू रासभा, महिषा, वेसराः, शृंगाला लोमशिकाश्च। गजा व्याघ्रा द्वीपिनो विषादमापुः। हंसा उडड्डीयोडड्डीय मानसं जग्मुः। – विक्रमचरितम्, पृ. 29
37. जय जय शूकर जय जय घूकर जय भूधर विश्रान्तमते! जय धरणीधर जय घोणीवर पीनश्रोणी–जनितनते। कर्दमचारिन् मलचयहारिन् सततं लोपितपंकतते। धरणीधरिन् जय जय नितरां मुस्ताक्षतिपातालगते।। – विक्रमचरितम्, पृ. 39
38. तेषु एकेन मिथ्याव्रतशास्त्रिानाम्ना रासभेन 'आदिवराहघूकरशूकरयोश्चरितस्य तुलनात्मकमध्ययनमिति शोधप्रबन्धे विरचितः विद्यावारिधिरित्युपाधिश्च लब्धः। अनन्तरं महता समारोहेण तस्य शोधप्रबन्धस्य मुद्रितो ग्रन्थो लोकार्पणं नीतः। अन्येन केनचित् मलकान्तनाम्ना शुना घूकरमहाराजचरितं नाम महाकाव्यं पूरितं प्रकाश्यतां च नीतम्। – विक्रमचरितम्, पृ. 49
39. अनन्तरं चतुरकाया अन्ध्रौ अङ्घ्रिं नितम्बेन नितम्बं, गण्डेन गण्डं च घटट्यन् तस्या रूपसुधां नयनचषकाभ्यां पिबन् तस्या वचनं श्रृण्वन् तस्यास्तन्वीं तनुं स्पृशन्, तद्गन्धं जिघ्रंस्तया सह मृतप्राप्तस्य सिंहाद्यैरर्धपभुक्तस्य कस्यचिद् हरिणस्य मांसमश्नंश्चिजहार। – विक्रमचरितम्, पृ. 47
40. सुप्यति स्त्रियाहितभारः निशमयति स्त्रीमुखेन च वाचिकम्।
नृपतिर्नश्यति सद्यो भग्नं भवति तथा च राज्यम्। – विक्रमचरितम्, पृ. 46

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. विक्रमचरितम्– लेखक त्रिपाठी राधावल्लभ, प्रतिभा प्रकाशन, 29/5, शक्ति नगर, दिल्ली–110007, 1999.